वेद का महत्त्व →

(i) शब्द प्रमाण→ ईश्वरवादी ईश्वर को अनादि और अनन्त स्वीकार करते हैं। यतः वेद भगवान् की वाणी है, अतः वह भी अनादि एवं अनन्त है। स्मृतिवचन है –

'अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा'।

अर्थात्
वेद स्वयम्भू ब्रह्मा की वाणी है जिसका न कोई आदि है न अन्त। अतः वह नित्य है। इसी कारण वेदवचन को आप्तवचन के रूप में स्वीकार किया जाता है। वेद में प्रतिपादित समग्र सिद्धान्त, आस्तिक दर्शनों के द्वारा शब्दप्रमाण के रूप में गृहीत है। इनके अनुसार प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण से जिन बातों का ज्ञान नहीं हो सकता है, उनका बोध वेदों द्वारा ही होता है। वस्तुतः अनेक स्थानों पर वेद को भगवान् की निःश्वास कहा गया है –

'अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो
यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरसः।'
(बृहदारण्यकोपनिषद् 2/4/10)

स्मृतियों का कथन है –

प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते।
एनं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता

Dhananjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner

अर्थात्

प्रत्यक्ष, अनुमान और उपमान आदि साधनों के द्वारा जो उपाय नहीं जाना जा सके, वह उपाय वेद से जाना जा सकता है, यही वेदों का महत्त्व है, वेदत्व है।

(ii) धार्मिक महत्त्व → भारत की सनातन मान्यताओं के अनुसार वेद अपौरुषेय अथवा सर्वज्ञ स्वयं भगवान की लोकहिताय रचना है। शास्त्रों में सम्पूर्ण वेद का धर्म के मूल रूप में आख्यान किया गया है। धर्म के मूल तत्त्वों को जानने का एकमात्र साधन वेद हैं। मनुस्मृति में कहा भी गया है- 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्'। मनु वेदों को सर्वज्ञानमय और सब विद्याओं का स्रोत मानते हैं तथा मानवमात्र के कर्त्तव्यज्ञान के लिए वेदों को आधार मानते हैं-

यः कश्चित् कस्यचिद् धर्मो मनुना परिकीर्तितः।
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः॥ (2/7)

वेदविरुद्ध आचरण होने पर मानव का मानवधर्म निभाना असम्भव है क्योंकि शास्त्रवचन है- 'आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः'।

इसके अतिरिक्त देवताओं, उनके स्वरूप, स्तुति, अर्चना, उपासना, उनसे प्राप्त होने वाले लाभ आदि सभी धार्मिक तत्त्वों का निरूपण वेदों में उपलब्ध होता है

(iii) सांस्कृतिक महत्त्व → भारतीय संस्कृति के प्राणतत्त्व वेद ही हैं। इस संस्कृति के मूल तत्त्व हैं- आचार, आध्यात्मिकता, पुरुषार्थसाधना, आश्रमव्यवस्था, संस्कार, यज्ञ, धार्मिक अनुष्ठान, देवपूजन तथा कर्मकाण्ड। इन तत्त्वों का सविस्तर विवेचन वैदिक वाङ्मय में पदे-पदे प्राप्त होता है। अथर्ववेद के अनुसार प्रत्येक मानव को अपने-अपने माता-पिता के प्रति स्वस्तिमय सद्भाव एवं प्रशस्त आचरण रखना चाहिए-

स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु (1/31/4)

पुनश्च अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमना (3/30/2)

सुमति की प्रार्थना प्राचीनतम वैदिककाल से ही चली आ रही है। ऋग्वेद में कहा गया है- महस्ते विष्णो सुमतिं

Scanned with CamScanner

भजामहे (1/156/3)। यज्ञों का सम्पादन भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। यही यज्ञ वेदों का मुख्य प्रतिपाद्य है। यज्ञ के सम्बन्ध में कहा गया है कि यज्ञ ही समस्त भुवनों का केन्द्र है→ 'अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः' (शुक्लयजुर्वेद- 23/11)।

(iii) शास्त्रीय महत्त्व → वेदों को सकल विद्याओं की बीजरूप स्वीकार किया जाता है। ज्ञान-विज्ञान की ऐसी कोई शाखा नहीं ~~जिसके बीज~~ जिसका उत्स यहाँ न हो। दर्शन, धर्मशास्त्र, काव्यशास्त्र, कामशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद, व्याकरण, भाषाशास्त्र, मनोविज्ञान, संगीत प्रभृति नानाविध विद्याओं के मूलभूत ज्ञान के लिए वेदों के शरण में ही जाना पड़ता है। इस सम्बन्ध में विस्तृत विवेचना यथास्थान की जायेगी।

(iv) सामाजिक महत्त्व → भारतीय समाज के समारम्भ का प्रथम स्वरूप वैदिक साहित्य में मिलता है। ~~xxx~~ वेदों के अनुशीलन से स्पष्ट है कि उस युग में अनेक संस्कृतियों के अनुयायियों और अनेक भाषाओं के बोलने वालों में पृथ्वी-रूपी एक घर के सदस्य होने का विचार विकसित हो चुका था। सामाजिक एकता का दार्शनिक आधार था ब्रह्म से ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि सबका उद्भव होना। ऋग्वैदिक ऋषि का कथन है→

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।।
(10/90/12)

(v) राजनीतिक महत्त्व → प्राचीन भारत का राजनैतिक चिन्तन हमें वेदों के माध्यम से ज्ञात होता है। राजत्व की प्रतिष्ठा ऋग्वैदिक काल में भली-भाँति हो चुकी थी। राजा, मंत्री, प्रजा - इनका क्या कर्त्तव्य होना चाहिए इस उल्लेख वेदों में प्राप्त होता है। राजा को चाहिए कि वह निरन्तर प्रजा के कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहे तथा उसके शत्रुओं को दूर भगाए। यह कहने में किञ्चित् मात्र भी विचिकित्सा नहीं है कि वेदवाक्य राष्ट्रप्रेम, देशसेवा

Scanned with CamScanner

और उत्सर्ग के प्रेरक हैं। ऋग्वेद के इन्द्रसूक्त में जगदीश्वर से स्वराष्ट्र के लिए धन-धान्यवान् पुत्रों से समृद्ध होने की कामना की गई है।→

"स्वायुधं स्ववसं सुनीथं चतुः समुद्रं धरुणं रयीणाम्।
चर्कृत्यं शंस्यं भूरिवारमस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः॥"
(10/47/2)

अर्थात् हे परमैश्वर्यवान् परमात्मन्। आप हमें धन-धान्य से सम्पन्न ऐसी संतान प्रदान कीजिए, जो उत्तम और अमोघ शस्त्रधारी हो, अपनी और अपने राष्ट्र की रक्षा करने में समर्थ हो तथा न्याय, दया-दाक्षिण्य और सदाचार के साथ जन-समूह का नेतृत्व करने वाली हो, साथ ही नाना प्रकार के धनों को धारण कर परोपकार में रत एवं प्रशंसनीय हो तथा लोकप्रिय एवं अद्भुत गुणों से सम्पन्न होकर जन-समाज पर कल्याणकारी गुणों की वर्षा करने वाली हो।

वस्तुतः वेदों में राष्ट्रियता की उदात्त भावना का भरपूर समावेश तो है ही, राजनीति किंवा राजधर्म के व्यावहारिक पहलुओं पर भी वैदिक ऋषियों ने जनोपयोगी दृष्टि दी है।

(VII) भाषा-वैज्ञानिक महत्त्व → अनेक अकाट्य प्रमाणों के आधार पर आचार्य बलदेव उपाध्याय ने यह प्रमाणित किया है कि तुलनात्मक भाषाविज्ञान के अध्ययन में वैदिक वाङ्मय ने नितान्त नवीन दृष्टि दी है। उनका मन्तव्य है कि वैदिक भाषा के अध्ययन ने भाषाविज्ञान को सुदृढ़ भित्ति पर प्रतिष्ठित किया है। विद्वानों का अभिमत है कि वेदों का अनुशीलन करना प्रत्येक भाषाशास्त्र के रहस्यवेत्ता व्यक्ति के लिए बहुत आवश्यक है। भाषा का क्रमिक विकास किस रूप में और कैसे हुआ, इसके ज्ञान के निमित्त वेदों का अध्ययन अपेक्षित है।

(VIII) साहित्यिक महत्त्व → वेद भारती अलोकसामान्य काव्य-प्रतिभा के मूल हैं। समस्त विश्व के साहित्य में वेदों का जितना समादर है उतना किन्हीं अन्य ग्रन्थ का नहीं। वेद ज्ञान-विज्ञान के महार्णव हैं। इनकी प्रत्येक ऋचा में लोकमंगल की कामना सन्निविष्ट है। इसीलिए स्वयं वेद

Dhananjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner

भी अपने को काव्य कहता है — 'पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति'। यहाँ काव्य को अजर-अमर कहकर काव्य तत्त्वों को सूत्र रूप में एकत्र समाहित कर लिया गया है।

यद्यपि वेदों में प्रभुसम्मित शब्दों की ही प्रमुखता है तथापि उनमें काव्यात्मकता का अभाव नहीं है। वेदोत्तरकाल में काव्य में जिन तत्त्वों की प्रतिष्ठा हुई, वे वेदों में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। वास्तविकता तो यह है कि उन्हीं तत्त्वों को लेकर अभिनव काव्य स्वरूप को प्रतिष्ठापित करने की चेष्टा हुई। काव्यमीमांसाकार आचार्य राजशेखर की यह श्रुति स्तुति सर्वथा अवितथ है —

"नमोऽस्तु तस्यै श्रुतये यां दुहन्ति पदे पदे।
ऋषयः शास्त्रकाराश्च कवयश्च यथामति॥"

अर्थात् उस श्रुति को प्रणाम है, जिस श्रुति रूपी गौ को मंत्रद्रष्टा ऋषि, शास्त्रकार एवं कविगण पद-पद पर दुहते रहते हैं।

Dhananjay Vasudeo Dwivedi

Scanned with CamScanner